

उपनिषद् (सामान्य परिचय)

उपनिषद् शब्द उप तथा नि उपसर्ग पूर्वक सद् धातु से क्विप् प्रत्यय लगाकर निष्पन्न होता है। इसका सामान्य अर्थ होता है- गुरु के समीप बैठकर प्राप्त किया गया ज्ञान। फिर भी सद् धातु के तीन अर्थों से आध्यात्मिक उत्कर्ष वाले निर्वचन किए गए हैं। सद् धातु के तीन अर्थ हैं- विशरण (नाश), गति (ज्ञान या प्राप्ति) तथा अवसादन (शिथिल करना)। इसलिए शङ्कराचार्य कहते हैं-

उपनिषादयति सर्वानर्थकरं संसारं विनाशयति,
संसारकारणभूतामविद्यां च शिथिलयति, ब्रह्म च गमयति।
(ईशावास्योपनिषद् भाष्य)

अर्थात् सभी अनर्थों को उत्पन्न करने वाले संसार का यह विनाश करती है, संसार के हेतु स्वरूप अविद्या को शिथिल करती है और ब्रह्म की प्राप्ति करवाती है। उपनिषदों का अध्ययन एकान्त में गुरु के प्रसाद से होता है अतः उसे 'रहस्यविद्या' भी कहते हैं। उपनिषदों का मुख्य प्रतिपाद्य ब्रह्म, सृष्टि, आत्मा, प्राण, पुनर्जन्म, कर्म तथा नैतिकता है।

मुक्तिकोपनिषद् के अनुसार इनकी संख्या 108 हैं, जिन्हें वेदों से जोड़ने का प्रयास हुआ है- ऋग्वेद की 10, शुक्लयजुर्वेद की 19, कृष्णयजुर्वेद की 32, सामवेद की 16 तथा अथर्ववेद की 31 उपनिषदें हैं। उपनिषदों की संख्या इससे भी अधिक तक स्वीकार की गई है। 'कल्याण' के उपनिषदङ्ग में 220 तथा 'उपनिषद-वाक्य-महाकोश' में 223 उपनिषदों का उल्लेख है। 10 उपनिषदों पर शङ्कराचार्य ने भाष्य लिखा है इनके विषय में मुक्तिकोपनिषद् में कहा गया है-

ईश-केन-कठ-प्रश्न-मुण्ड-माण्डूक्य-तित्तिरिः

ऐतरेयं च छान्दोग्यं बृहदारण्यकं तथा॥

(मुक्तिकोपनिषद् 2/30)

इसमें ईशोपनिषद्, केनोपनिषद्, कठोपनिषद्, प्रश्नोपनिषद्, मुण्डकोपनिषद्, माण्डूक्योपनिषद्, तैत्तिरीयोपनिषद्, ऐतरेयोपनिषद्, छान्दोग्योपनिषद् तथा बृहदारण्यकोपनिषद् निर्दिष्ट हैं।

बृहदारण्यकोपनिषद्

यह उपनिषद् शुक्लयजुर्वेद से सम्बद्ध शतपथ ब्राह्मण के अन्तिम छः अध्यायों की संज्ञा है। आरण्यक तथा उपनिषद् दोनों के मिश्रण के कारण इसका यह नाम पड़ा। यह आकार में ही विशालकाय नहीं है, अपितु तत्त्वज्ञान में अग्रगण्य है। यह अध्यात्म शिक्षा से ओत-प्रोत है। इसमें कुल छः अध्याय हैं। इसके प्रथम अध्याय में यज्ञिय अश्व के रूप में परम पुरुष का वर्णन, मृत्यु का विकराल रूप, जगत् की उत्पत्ति तथा प्राण की श्रेष्ठता का वर्णन है। द्वितीय अध्याय में दो प्रमुख संवाद हैं। गार्ग्य काशिराज अजातशत्रु को ब्रह्म का स्वरूप समझाते हैं किन्तु अजातशत्रु इस विषय को स्पष्टतर करते हैं। इसी अध्याय में याज्ञवल्क्य और उनकी पत्नी मैत्रेयी का भी संवाद है, जहाँ याज्ञवल्क्य मैत्रेयी को आत्मा का स्वरूप रोचक ढंग से समझाते हैं।

तृतीय अध्याय में जनक की सभा में याज्ञवल्क्य का अपने प्रतिपक्षियों को हराना तथा गार्गी और याज्ञवल्क्य के प्रश्नोत्तरों का वर्णन है। चतुर्थ अध्याय में याज्ञवल्क्य का जनक को ब्रह्मविद्या का उपदेश तथा पुनः मैत्रेयी को ब्रह्मविद्या के उपदेश का वर्णन है। पञ्चम अध्याय में ब्रह्म, प्रजापति, गायत्री, परलोक आदि के विषय में विचार किया गया है तथा अन्तिम एवं षष्ठ अध्याय में प्राण की श्रेष्ठता, ऋषि प्रवाहण जाबालि और श्वेतकेतु का दार्शनिक संवाद तथा उपनिषदीय ऋषियों की वंश-परम्परा का विस्तृत वर्णन प्राप्त होता है।

याज्ञवल्क्य-मैत्रेयी संवाद

बृहदारण्यक उपनिषद् की यह कथा प्रसिद्ध है कि वृद्धावस्था आने पर दार्शनिक-शिरोमणि याज्ञवल्क्य ने अपनी सम्पत्ति का विभाजन अपनी दोनों पत्नियों, कात्यायनी तथा मैत्रेयी के बीच में कर दिया। तब विदुषी मैत्रेयी ने अस्थिर लौकिक सम्पत्ति के ग्रहण करने में बड़ी अनास्था दिखाई और पूछा कि यदि यह सम्पूर्ण पृथिवी मेरे लिए धन से पूर्ण

हो जाए तो क्या मैं उससे अमरत्व को प्राप्त कर सकूंगी? महर्षि ने उत्तर में कहा 'बिल्कुल नहीं'। तुम्हारा जीवन उस व्यक्ति के जीवन के समान होगा जिसे आनन्द की समस्त सामग्रियाँ प्राप्त हैं, परन्तु केवल धन-प्राप्ति से अमरत्व पाने की तनिक भी आशा नहीं है। तब मैत्रेयी ने पुनः पूछा कि जिस धन से अमरत्व की प्राप्ति नहीं होती उसको लेकर मैं क्या करूंगी? मैं तो अमरत्व की भूखी हूँ। इसके पश्चात् याज्ञवल्क्य ने मैत्रेयी को जो आध्यात्मिक उपदेश दिया वह भारतीय धर्म तथा दर्शन के इतिहास में सदा अमर रहेगा। उन्होंने कहा- पति के लिए पति प्यारा नहीं है, बल्कि आत्मा के लिए। पुत्र के लिए पुत्र प्यारा नहीं है, बल्कि आत्मा के लिए। संसार को समस्त वस्तु अपने लिए प्यारी नहीं होती, बल्कि आत्मा के लिए होती है। अतः सबसे प्रिय वस्तु आत्मा ही है। इसलिए इस आत्मा का प्रत्यक्ष करना चाहिए, श्रवण करना चाहिए, मनन करना चाहिए तथा निदिध्यासन (सतत ध्यान करना) चाहिए क्योंकि आत्मा के दर्शन, श्रवण, मनन तथा विज्ञान से सब कुछ जाना जा सकता है-

आत्मा वा अरे द्रष्टव्यः श्रोतव्यो मन्तव्यो निदिध्यासितव्यो
मैत्रेय्यात्मनो वा अरे दर्शनेन श्रवणेन मत्वा विज्ञानेनेदं सर्वं विदितम्।
(बृहदारण्यकोपनिषद् 2/4/5)

महर्षि याज्ञवल्क्य का यह उपदेश भारतीय दर्शन तथा धर्म की मूल भित्ति है। मानव जीवन का चरम लक्ष्य आत्मा का साक्षात्कार करना है। इस अनुभव के लिए उपनिषद् तीन साधनों का उपदेश देती है- श्रवण, मनन तथा निदिध्यासन। आत्मतत्त्व का श्रवण करना चाहिए श्रुति वाक्यों से, तार्किक युक्तियों से मनन करना चाहिए तथा योग प्रतिपादित उपायों के द्वारा निदिध्यासन करना चाहिए-

श्रोतव्यः श्रुतिवाक्येभ्यो मन्तव्यश्चोपपत्तिभिः।

मत्वा तु सततं ध्येय एते दर्शनहेतवः। (विद्वन्मनोरञ्जनी)